संपादकीय

समय की शिला पर

19वीं सदी के मध्य तक भारतीय भाषाओं में आधुनिकता की अनुगूंज सुनाई देने लगी थी। हिंदी में भारतेंदु जी का विपुल साहित्य, उनके निबंध,नाटक,और कविताओं में आधुनिक चेतना की प्रतिच्छाया पड़ने लगी थी।हालांकि ज्यादातर कविताएं उन्होंने ब्रजभाषा में लिखी हैं, लेकिन उनका गद्य सीधे- सीधे अपने युग से संवाद था। कहा जाता है कि भारतेंदु युग हिंदी में आधुनिकता का प्रवेश द्वार है। बनारस चौक के बगल में एक अत्यंत संकरी ठठेरी बाजार की गली में आज भी भारतेंदु जी का घर है जहां यादगार स्वरूप वह डोली रखी हुई है जिसमें बैठकर वे कहीं आया- जाया करते थे।

साहित्यकारों का तीर्थ स्थल है वह घर।लोग दूर - दूर से उसे देखने आया करते हैं। इस बार स्वनिम के कवर पेज के लिए हमने भारतेंदु जी के घर का चित्र लिया है। बंगाल के पढ़े- लिखे लोग जिस तरह रवींद्र नाथ टैगोर को अपनी बांग्ला अस्मिता से जोड़कर देखते हैं, वह आत्मीयता और गौरव भाव हिंदी भाषियों में अपने भारतेंदु को लेकर नहीं दिखती है।

सेठ अमीचंद ,जिन्होंने कभी ईस्ट इंडिया कंपनी को कर्ज देकर दिवालिया होने से बचाया था, उन्हीं के प्रपौत्र गोपालचंद्र जी के बेटे थे भारतेंदु। संपन्नता का आलम यह था कि उनका घर वैसे तो साक्षात लक्ष्मी का मंदिर था,लेकिन वे ठहरे सरस्वती के वरद पुत्र।ईस्ट इंडिया कंपनी को कर्ज देने की बात पर भारतेंदु जी कहा करते थे कि इस धन ने हमारे पुरुखों को खाया है, मैं इस धन को खा जाऊंगा। उनके जीवन के हिस्से मात्र 35 वर्ष का अत्यल्प समय था, जिसका एक-एक क्षण उन्होंने साहित्य के लिए समर्पित कर दिया था।वे उन रचनाकारों में नहीं थे जो पुस्तकालयों और प्रकाशन संस्थाओं के भरोसे साहित्य सेवा कर रहे थे।साहित्य उनके सामाजिक सरोकार,और स्वतंत्रता संघर्ष का एक हिस्सा था।बलिया का प्रसिद्ध ददरी मेला,जिसका वर्णन फाह्यान तक ने किया है,वहां जाकर उन्होंने अपना नाटक "अंधेर नगरी" खेला था।

उन्होंने कई पत्रिकाओं का सम्पादन, संचालन किया। उनका घर साहित्यकारों का जमावड़ा स्थल बन गया था। भाषा को लेकर राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द से वे कई स्तरों पर टकराये और हिंदी, हिन्दू, हिंदुस्तान का उद्घोष किया। कहा जाता है कि 'सितारेहिंद' के विरोध में ही लोगो ने उनको 'भारतेंदु' कहना शुरू किया था।

“भारत वर्षोन्नति कैसे हो” किसी खास अवसर पर दिया गया उनका व्याख्यान है, जो बाद में निबंध के रूप में प्रकाशित और काफी चर्चित हुआ। हिंदी साहित्य में आधुनिकता का अर्थ ही था गद्य विधा के माध्यम से यथार्थवाद की प्रतिष्ठा।उन्होंने अपने निबंधों और नाटकों के माध्यम से जिस यथार्थवाद की बुनियाद डाली उसी का विकास प्रेमचंद की कहानियों और उपन्यासों में चरम पर दिखाई देता है।

हम कृतज्ञ हैं कि हमारे यशस्वी कुलपति,जो स्वयं एक संवेदनशील कवि हैं,उन्होंने हिंदी विभाग के लिए एक अलग "भारतेंदु भवन" की अपनी परिकल्पना को साकार किया है। आज लगभग डेढ़ -पौने दो सौ साल बाद जब हम 21 वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं तब आधुनिक युग के बादआज के समय को उत्तर आधुनिक कहा जाने लगा है। तकनीक ने हमारे युग ,व्यक्ति और समय को अपनी मजबूत गिरफ्त में ले लिया है।ऐसा प्रतीत होता है कि अब वह साधन मात्र न होकर साध्य हो चुकी है।

हमारे बचपन की स्मृतियां दादी की कहानियों जैसी लगती हैं। हम दिन- रात अपने मोबाइल के सहारे दुनिया के संपर्क में बने रहते है। लेकिन दुनिया तो छोड़ दीजिए मां बाप,भाई बहन जैसे आत्मीय रिश्तों में भी संवेदना विलुप्त सी होती जा रही है।सब कुछ बस एक सूचना है। हमारे जीवन से पुरानी चिट्ठियों की गंध खत्म हो गयी है। घर के एक कमरे में सब अपने अपने मोबाइल पर व्यस्त हैं।आपसी बातचीत में सिर्फ हां....हूँ....जैसे कुछ शब्द रह गए है। ऐसे में कागज पर लिखे शब्दों का क्या भविष्य है?

बाल्मीकि और भवभूति से चली आ रही कबीर और तुलसी की परंपरा का क्या होगा? क्या तकनीक ने हमसे हमारी कल्पना और हमारा अतीत छीन लिया है। क्या हम पूरी तरह यथार्थजीवी होकर रह जाएंगे। यह आदर्शों के खोते जाने का युग है। सभी कहते-प्रेक्टिकल बनिये।

ऐसे में साहित्य की ही भूमिका बच रहती है।हम साहित्य इस लिए नहीं रचते या पढ़ते कि समाज में मनुष्यता बची रहेगी, अगर ऐसा हो तो बहुत अच्छा,नहीं तो इतना तो जरूर होगा कि हमारी सृजन धर्मिता हमारे भीतर के मनुष्य को जरूर बचाये रखेगी। आपके हाथों में जा रहा यह "स्वनिम" का संयुक्तांक है। पाठक अपनी प्रतिक्रिया चिट्ठियों के माध्यम से भेजें तो हम उन्हें प्रकाशित करेंगे।